मज़हब और आपसी इख़्तेलाफ़

हुज्जतुल इस्लाम वलमुस्लिमीन मौलाना सै० हसन नक़वी साहब

मज़हब की ज़रूरत और अहमियत के मुक़ाबले में ये एतेराज सुनाई देता है कि अगर सभी मज़हब वाले अपने मज़हब के पाबन्द हो जाएं तब भी इख़्तेलाफ़ों का होना लाज़मी होगा। इसलिए कि इस हक़ीक़त से इनकार नहीं किया जा सकता कि हर मज़हब के दूसरे मज़हबों से कुछ उसूल टकराते हैं और जब हर मज़हब का पाबन्द अपने मज़हब पर अमल करेगा तो लाज़मी तौर पर ये उसूल उनकी माद्दी ज़िन्दगी पर भी असर डालेंगे जिसके बाद रहन-सहन में फ़र्क़ पैदा हो जाएगा और हर एक मज़हब वाला दूसरे से अलग रास्ते पर चलेगा जिसका लाज़मी नतीजा ये होगा कि हर दिमाग़ में दूसरे से अलग होने की समझ पैदा होगी और जितनी ज़्यादा मज़हब पर पाबन्दी सख़्त होगी उतना ही इख़्तेलाफ़ भी सामने आता जाएगा यहाँ तक कि एक आख़री वक़्त वह भी ज़रूर आएगा जब आपस में ख़ून-ख़राबा होगा जिससे इन्सानियत बिखर जाएगी और आपसी ज़िन्दगी में ऐसी ख़राबी पैदा हो जाएगी कि अम्न के फ़रिश्ते की लाश ख़ून और मिट्टी में सन जाएगी इसलिए मज़हब बजाए अम्न के पैग़ाम के जंग का पैग़ाम साबित होगा।

इस एतेराज़ का जवाब यूँ दिया जा सकता है कि ये टकराव अस्ल मज़हब की बुनियाद पर नहीं होता बल्कि इन्सानी जंगी फ़ितरत से होता है चुनानचे मज़हब से नज़र हटाते हुए दुनिया का कोई ऐसा मुल्क नहीं जहाँ कई सियासी पार्टियाँ न हों। ज़ाहिर है कि इनके उसूलों में आपस में इख़्तेलाफ़ है नहीं तो फिर अलग-अलग कैसे कही जा सकती हैं और जब अलग-अलग जमाअतों के अलग-अलग उसूल हैं तो उनके आलिमों में भी इख़्तेलाफ़ यक़ीनन होगा जिसके बाद इस तरह खींचा-तानी होगी जिस तरह मज़हब के पाबन्द लोगों में हो सकती है।

लेकिन मज़हबों के तो फिर भी महदूद उसूल हैं और सियासी जमाअतों का पैदा होना एक न ख़त्म होने वाला सिलसिला है दुनिया के मज़हब जो अपनी असल बुनियाद के एतेबार से सच्चे नहीं उनके उसूल तो अल्लाह की तरफ़ से तय किये गये हैं और जो ऐसे न हों वह भी कुछ ख़ास इम्तियाज़, और शख़सियत वाले लोगों के बनाये हुए हो सकते हैं जो एक बड़ी जमाअत को अपना दीवाना बना सकें और अपने को ख़ालिक़ से जोड़ सकें। अब ये ज़ाहिर है कि अल्लाह की तरफ़ से तय किये हुए उसूल अलग-अलग और टकराव वाले नहीं हो सकते और ख़ास शख़सियत रखने वाले इन्सान भी सैकड़ों साल में कुछ ही पैदा होते हैं इसलिए मज़हबों की फिर भी एक हद है लेकिन सियासत एहसासों और ख़ायालों के अलग-अलग नज़रियों से पैदा होती है और इन्सानी एहसासों की कोई हद नहीं, इसलिए वह क़ानून जो एहसासों और ख़यालों से बनते हैं उनकी भी कोई हद नहीं होगी नतीजा ये होगा कि मज़हब की पाबन्दी से कुछ इख़्तेलाफ़ पैदा होंगे और ख़यालों की पाबन्दी से बहुत ज़्यादा इख़्तेलाफ़ पैदा होंगे तो मज़हब को ख़त्म करना

महदूद इख़्तेलाफ़ को मिटाना है और सियासत की हुकूमत क़ायम करना बहुत से इख़्तेलाफ़ों का पैदा करना है।

इसलिए सिर्फ़ मज़हब पर इल्ज़ाम लगाना कहाँ का इन्साफ़ है? हाँ अगर इख़्तेलाफ़ों को ख़त्म करना है तो पूरी दुनिया की या तो एक सियासी जमाअत बनायी जाए या वक़्ती तौर पर पूरी दुनिया में एक मज़हब बाक़ी रखा जाए लेकिन पूरी दुनिया में वक़्ती तौर पर एक सियासत चल जाए तो भी इख़्तेलाफ़ पैदा होंगे क्योंकि सियासत हमारी बाहरी, बल्कि ज़ाहिरी ज़िन्दगी में बन्दिश पैदा कर सकती है, लेकिन अन्दुरूनी ज़िन्दगी उसकी पकड़ से बाहर है नफ़्स की हरकतों पर सियासत बाँध नहीं बाँध सकती वह सिर्फ़ मज़हब ही है जो ज़िन्दगी के हर हिस्से में ज़िन्दगी की हर-हर साँस के साथ-साथ रहता है इसलिए मालूम हुआ कि आख़िर में वह मज़हब ही हक़ है जो सभी दूसरे मज़हबों पर छा जाए और इत्तेहाद का नुक़्ता हो सकता है। ✦✦✦

बक़िया .... मुसलमानों का वास्तविक बहुदल

मुहम्मद[स०] दूसरों को भी साथ लाते। हुसैन यदि करबला में केवल अपने प्राण दे देते तो मुसलमानों के लिये पूर्णरूपेण उचित आदर्श न हो पाता इस लिये यह कहा जा सकता था कि वह मासूम (पापहीन) थे, जो मासूम न हो वह इतनी कठिन परीक्षा नहीं दे सकता। हुसैन अपने साथ यदि केवल बनी हाशिम को लाये होते तो यह कहा जा सकता था कि वह हाशमी रक्त का प्रभाव था, वह फ़ातिमा के दूध की शक्ति थी जो केवल बनी हाशिम, या अली व फ़ातिमा की संतानों तक ही सीमित थी दूसरे के बस की यह बात नहीं है परन्तु इमाम हुसैन ने अपने साथ अपने कुटुम्बियों (सम्बन्धियों) के अतिरिक्त बहुत से साथियों एवं सहायकों (समर्थकों) को साथ लिया जिनके विचारों, भावनाओं एवं कार्यों में एकीकरण का कारण इस्लाम की सहायता के अतिरिक्त और कुछ नहीं हो सकता। वास्तव में इतने एक विचार, एक हृदय, एक वाणी, दृढ़-निश्चयी पूर्णरूपेण अडिग मुसलमान संसार के सम्मुख न करबला की घटना के पूर्व कभी आये तथा न कर्बला की घटना के पश्चात् एवं यह करबला की घटना का वह विशेष पहलू है जिसके कारण मुसलमानों को सदैव इसकी स्मृति माननी चाहिए। ✦✦✦